Emerging Trends in Education [Vol. 3 - No. 2. pp 62-66]

वर्तमान शिक्षा में मूल्य एवं आध्यात्मिक शिक्षा की प्रासंगिकता

शशिकान्ति त्रिपाठी*
दिनेश पाण्डेय**

वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में नैतिक एवं नीतिगत सिद्धान्तों का ह्रास हमारे सामाजिक एवं व्यक्तिगत विकास के लिए नित नई बाधाओं को जन्म दे रहा है। इन नैतिक एवं नीतिगत सिद्धान्तों के पतन की जड़ है शिक्षा में भौतिकता का पूर्णरूपेण समावेश। आज मानव भी पदार्थ रूप में परिभाशित किया जाने लगा है, ऐसे में मानव की मानविक व शाश्वत विशेषताएँ धीरे धीरे क्षीण होती जा रही हैं। परिणामस्वरूप हम चारित्रिक कमजोरियों से ग्रस्त एक ऐसे मानव समाज की ओर बढ़ रहे हैं जिसमें आंतरिक गुणों यथा–पवित्रता, शांति, प्रेम, आनन्द एवं शक्ति का सर्वथा अभाव रहेगा। शिक्षा मानव निर्माण की प्रक्रिया है एक ऐसा मानव जो आंतरिक गुणों से युक्त हो न कि मशीन। वर्तमान शिक्षा मानव को कारखानों में निर्मित मशीन बनाने की ओर अग्रसर हो रही है। ऐसे में मूल्य एवं आध्यात्मिक शिक्षा द्वारा मानव को आंतरिक गुणों युक्त बनाना काफी प्रासंगिक, समीचीन एवं चुनौतीपूर्ण कार्य है। औद्योगिकीकरण, मशीनीकरण एवं शहरीकरण के बाद की शिक्षा व्यवस्थाओं में छात्रों को तकनीकी ज्ञान युक्त शिक्षा की ओर आकर्षित किया जिसके द्वारा विकास के नए आयाम तय किए जा सकें। फलस्वरूप पूरे विश्व में शिक्षा का आधुनिक स्वरूप विकसित हुआ जिसमें तकनीकी ज्ञान युक्त शिक्षण अधिगम द्वारा विकास के नए मापदंड तय किए गए। व्यक्तिवाद एवं भौतिकवाद के सम्मिश्रण से आज के संवेदनाहीन मानव समाज का निर्माण हुआ है। हम यह भूल बैठे हैं कि शिक्षा द्वारा समाज एवं विश्व कल्याण भी संभव है बशर्ते मानव संवेदनशील हो तथा उनमें मूल्य एवं आध्यात्मिक ज्ञान संगठित हो। प्राथमिक स्तर से उच्च शिक्षा तक हम एक प्रतिद्वन्द्वी की तरह भौतिक शिक्षा प्राप्त करने की होड़ में शामिल हैं। ऐसी शिक्षा द्वारा मानव का न तो व्यक्तिगत विकास होगा और न ही सामाजिक वैश्विक समृद्धता ही प्राप्त होगी।

18 वीं शताब्दी में सर अलेकजेन्डर जान्सट्न ने चार्ल्स ग्रान्ट को जो कि बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के अध्यक्ष थे, एक पत्र लिख कर भारत में शिक्षा व्यवस्था के नैतिक व धार्मिक महत्व को बताया। उन्होंने लिखा कि भारत के प्रत्येक गॉव में बालक की शिक्षा माता–पिता का दायित्व है तथा यह बालक के पाँच वर्ष की आयु पूर्ण होने पर भगवान गणेश की मूर्ति के समक्ष एक धार्मिक आयोजन द्वारा प्रारम्भ की जाती है जिससे छात्र बुद्धि विधाता गणेश की सहायता से बुद्धिमता को प्राप्त करता है। इस सन्दर्भ में यह कहना समीचीन है कि शिक्षा को जीवन, अध्यात्म व नैतिकता से जोड़ना हमारे प्राचीन शिक्षा व्यवस्था का अभिन्न अंग रहा है। कालान्तर में व्यावसायिक शिक्षा द्वारा शिक्षा के इस आधार को अछूता छोड़ दिया गया। परिणामस्वरूप शिक्षा को सिर्फ आर्थिक जगत से जोड़कर ही देखा जाने लगा।

* एसोशिएट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी।
** प्रवक्ता, इंस्टिट्यूट ऑफ एजुकेशन, शेपा, वाराणसी।

शिक्षा का नैतिक आधार

शिक्षा व्यक्ति के व्यवहार, चरित्र, आचरण, मनोवृत्ति, भावनाओं और विचारों के शुद्धिकरण एवं ज्ञानार्जन की वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुश्य सुखमय एवं शान्तिमय जीवन व्यतीत करता है। इन्हीं आधारभूत विशेषताओं को ध्यान में रखकर शिक्षाशास्त्रियों ने नैतिक शिक्षा को औपचारिक शिक्षा के अभिन्न अंग के रूप में स्वीकृति दी है। यद्यपि शिक्षा के सर्वोपरि उद्देश्यों में मानवीय गुणों के विकास को प्रथम स्थान दिया गया है तथापि आधुनिक शिक्षा के सन्दर्भ में इस महत्वपूर्ण पहलू को नजरअन्दाज करना पूरी शिक्षा व्यवस्था एवं छात्र के भावी जीवन में सुख एवं शान्ति के अभाव को पुष्ट करती है। **हरबर्ट** ने कहा है कि शिक्षा का सम्पूर्ण कार्य नैतिकता की अवधारणा में निहित है।

औपचारिक एवं अनौपचारिक शिक्षा में मूल्य एवं आध्यात्मिक शिक्षा :

औपचारिक शिक्षा में मूल्यों एवं आध्यात्मिक ज्ञान की स्थापना हेतु विद्यालय, विश्वविद्यालय, पुस्तकालय, मदरसे, सामाजिक संस्थायें आदि प्रमुख रूप से साधन माने जाते हैं जो कि पाठ्यक्रम, स्थान, समय, शिक्षण विधि अनुशीलन आदि द्वारा मूल्यों एवं आध्यात्मिक ज्ञान को सुनिश्चित कराते हैं। इस प्रकार ये औपचारिक साधन मूल्य एवं आध्यात्मिक ज्ञान की स्थापना हेतु महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

अनौपचारिक शिक्षा में परिवार, धर्म, समाज, राज्य, रेडियो, समाचार पत्र, टेलीविजन, चलचित्र, इन्टरनेट, खेलकूद के मैदान आदि प्रमुख साधनों के रूप में चिन्हित हैं। औपचारिक साधन जहाँ निश्चित पाठ्यक्रम में बँधे होते हैं वही अनौपचारिक साधनों का कोई निश्चित पाठ्यक्रम नहीं होता। इन साधनों में छात्र रहकर स्वतः स्फूर्त रूप से इन साधनों की संस्कृति एवं व्यवहार को सीखता है। वास्तव में दोनों औपचारिक एवं अनौपचारिक साधन छात्रों में मूल्य एवं आध्यात्मिकता की स्थापना हेतु महत्वपूर्ण हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) एवं संशोधित नीति 1992 ने शिक्षा को सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों की स्थापना हेतु एक आवश्यक साधन बनाने पर जोर दिया है। राष्ट्रीय पाठ्यक्रम फ्रेमवर्क (2000) ने भी मूल्य विकास हेतु शिक्षा के संदर्भ में मानव व्यक्तित्व के पाँच अनुक्षेत्रों यथा–ज्ञानात्मक, शारीरिक, भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्रों में विकास हेतु पाठ्यक्रम में इन तत्वों को सम्मिलित करने की संस्तुति की है।

विकास एवं मूल्य शिक्षा में सामंजस्य

शिक्षा चाहे औपचारिक हो या अनौपचारिक, मूल्य के बिना इसका अस्तित्व कायम नहीं रह सकता। भारत में शिक्षा अनेक धार्मिक एवं राजनीतिक सत्ताओं के प्रभाव से गुजरकर आज वहु संस्कृति प्रधान शिक्षा व्यवस्था में तब्दील हो गई है। यद्यपि विज्ञान, प्रौद्यौगिकी एवं सूचना प्रौद्योगिकी क्रान्ति का प्रभाव स्पष्ट रूप से शिक्षा पर देखा जा सकता है तथापि इसी भौतिकता आधारित शिक्षा को मानवीय मूल्यों के पतन का जिम्मेवार भी माना जाता है। आज आवश्यकता है कि तकनीकी, विज्ञान, सूचना क्रान्ति व मूल्यपरक शिक्षा के बीच एक सामंजस्य स्थापित किया जाए, लेकिन विकास की अंधी दौड़ इसके लिए एक रोड़ा है। परिणामस्वरूप हम घोर दुश्चिंताओं एवं अशांति को वढ़ावा दे रहे हैं जिसका परिणाम आज विघटित परिवार, भ्रष्ट नैतिकता व कुण्ठित सामाजिकता के रूप में हमारे समक्ष खड़ा है।

जेनेवा घोषणा पत्र में मानवीय मूल्य

जेनेवा के मानवीय मूल्यों की अन्तर्राष्ट्रीय सोसाइटी ने मानवीय मूल्यों के सम्बन्ध में अपने घोषणा पत्र में कहा है कि शांति एवं सौहार्द के साथ साझा जीवन जीने की कला सर्वोच्च मूल्य है। अतः इसे हर स्तर पर अपनाया जाना चाहिए। मनुष्य अगर सामूहिक रूप से शांति एवं सौहार्द के साथ जीता है तो मानवीय मूल्यों के विकास का सबसे बेहतर अवसर होता है। इस सन्दर्भ में शिक्षा व्यवस्था एक महत्वपूर्ण कारक बनती है जिसमें शिक्षा द्वारा सहयोगात्मक परिस्थितियों के निर्माण द्वारा शांति एवं सौहार्द का वातावरण बनाया जा सकता है जिससे मानवीय मूल्यों की स्वतः स्फूर्त स्थापना हो सके।

जेनेवा घोषणा पत्र में शांति एवं सौहार्दपूर्ण साझा जीवन जीने के योग्य सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक मूल्यों का व्यापक परीक्षण करके मानवीय मूल्यों के विकास हेतु ठोस एवं कारगर उपाय बताए गए है।

मूल्यों एवं आध्यात्मिकता को विकसित करने के साधन

मूल्य एवं आध्यात्मिकता हमारे प्राचीन शिक्षा व्यवस्था के अभिन्न अंग रहे हैं। वेदों, उपनिषदों एवं अन्य धार्मिक ग्रन्थों में मूल्यों की स्थापना हेतु कई उपाय बताये गये हैं। उदाहरणस्वरूप श्रीमद् भगवत्गीता के अध्याय 17 में वर्णित शारीरिक, वाणी सम्बन्धी एवं मानसिक तप के लक्षण बताये गये हैं जिनके आधार पर मन शरीर व वाणी को मूल्य एवं आध्यात्मिकता की कसौटी पर परखा जा सकता है।

अध्याय 17 के 14 वें श्लोक में शारीरिक तप हेतु निम्न मूल्यों की बात कही गयी है–

देवद्विजगुरू प्राज्ञपूजनं भौचभार्जवम।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च भारीरं तप उच्यते।।

अर्थात गुरू और ज्ञानी जनों का आदर, पूजन, पवित्रता, सरलता ब्रह्मचर्य, और अहिंसा यह शरीर सम्बन्धी तप कहे जाते हैं।

15 वें श्लोक में वाणी सम्बन्धी तप के अन्तर्गत कहा गया है–

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।
स्वाध्यायाम्यसनं चैव वाग्यमय तप उच्यते।।

अर्थात जो वाणी उद्वेग न करने वाला, प्रिय और हितकारक एवं यथार्थवाणी अथवा भाषण है जो वेद शास्त्रों के पठन एवं परमेश्वर के नाम जप का अभ्यास है वही वाणी सम्बन्धी तप कहे जाते हैं।

16 वें श्लोक के अन्तर्गत मानसिक तप के लक्षण बताये गये हैं–

मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः।
भाव स शुद्धिरित्येतन्तपो मान समुच्यते।।

अर्थात मन की प्रसन्नता, शांत भाव, मन का निग्रह और अन्तःकरण की पवित्रता, ये सब मन सम्बन्धी तप कहे जाते हैं। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में नैतिकता के असीमित प्रयोगों द्वारा हम शारीरिक, मानसिक व वाचिक कर्मों से नैतिकता की चाह में अपने मौलिक तपों से दूर होते जा

रहे हैं। ऐसे में मूल्यों का पतन होना स्वाभाविक है। आज शिक्षा व्यवस्था में हमारे प्राचीन मूल्यों यथा पूर्ववर्णित मन, शरीर व वाणी के तप को वर्तमान शिक्षा व्यवस्था में सम्मिलित करना होगा। यह इतना आसान नहीं है। नैतिकता पर आधारित पाठ्यक्रम में इन मूल्यों को अभी तक उचित स्थान नहीं दिया गया है तथापि भौतिकता में ही मूल्य खोजे जा रहे है, जो सर्वथा असंभव एवं अप्रासंगिक है।

मूल्यों को निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है यथा–शाश्वत मूल्य, आध्यात्मिक मूल्य, सामाजिक मूल्य, प्राकृतिक मूल्य, नैतिक मूल्य एवं आधुनिक वैज्ञानिक मूल्य।

शाश्वत मूल्य के अन्तर्गत शान्ति एवं प्रेम दो प्रमुख मूल्य हैं जो विभिन्न धार्मिक ग्रन्थों या स्रोतों द्वारा निर्धारित किये गये हैं। आध्यात्मिक मूल्य में योग, आत्मसंयम, परमसत्ता में विलीन होना आादि प्रमुख है। इनका भी स्रोत धार्मिक ग्रन्थ है। सामाजिक मूल्यों में सहयोग, सहनशक्ति, अधिकार एवं आचार आदि हैं जो विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों में मूल रूप से चिन्हित किये गये हैं। प्राकृतिक मूल्यों में श्रम का महत्व, स्वानुशासन, प्राकृतिक नियम एवं सिद्धान्त तथा शक्ति आदि को मुख्य रूप से स्वीकार किया गया है। नैतिक मूल्यों में सत्यता, ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठा आदि प्रमुख हैं। आधुनिक वैज्ञानिक मूल्यों में वैश्विक मूल्य एवं पर्यावरणीय मूल्य प्रमुख हैं जो कि सम्पूर्ण विश्व व ब्रहमाण्ड हेतु आवश्यक माने गये हैं।

वी0 के0 गोकाक ने पॉच बेसिक मानवीय मूल्यों को निर्धारित किया है यथा–सत्य, सदाचार, शान्ति, प्रेम एवं अहिंसा। इन पाँच प्रमुख मानवीय मूल्यों के अन्तर्गत उन्होंने कई उप मूल्यों को भी निर्धारित किया है जो निम्नलिखित है:

सत्य	सदाचार	शान्ति	प्रेम	अहिंसा
जिज्ञासा, कारण सभी धर्मों के प्रति सम्मान, धर्म निरपेक्षता, स्व–अध्ययन, विभेदीकरण	स्वच्छता ,साहस, प्रेम का महत्व, कर्तव्यनिष्ठा, समानता, विश्वसनीयता, ईमानदारी, न्याय, समय का सदुपयोग, बुद्धिमता, समयवद्धता, सेवा, सादा जीवन	व्यक्ति का सम्मान, ध्यान, एकाग्रता, अनुशासन, सहनशीलता, प्रयास, एकता, शुद्धता, स्व–अनुशासन, आत्म सम्मान	समर्पण, मित्रता मानवीयता, पशुओं पर दया, देश भक्ति,निष्ठा, सहानुभूति, सहनशीलता	नागरिकता के प्रति जागरूकता, सामाजिकता, अन्य संस्कृतियों का सम्मान, दया, सहिष्णुता, सद्व्यवहार, सहयोग, राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रीय अखण्डता, सामाजिक न्याय, सामाजिक सेवा

वुद्ध द्वारा प्रतिपादित अभिधम्म के सिद्धान्तों के अन्तर्गत भी मूल्यों पर आधारित आठ मग्गानगज यानि अष्टांगिक मार्ग बताये गये है जो मूल्यों को प्रतिस्थापित करते है।

1- Samma – ditthi = right view = सम्यक् दृष्टि
2- Samma - sankappa = right thought = सम्यक संकल्प
3- Samma – vaca = right speech = सम्यक वाणी
4- Samma - kammanta = right action = सम्यक क्रिया
5- Samma – ajiva = right livelihood = सम्यक आजीव
6- Samma – vayano = right effort = सम्यक प्रयास
7- Samma – sati = right mindfulness = सम्यक बुद्धि
8- Samma-samadhi=right concentration= सम्यक समाधि

नैतिक शिक्षा के अन्तर्गत अभिधम्म सिद्धान्त में शील शिक्षा के अन्तर्गत सम्यक् वाणी, सम्यक् क्रिया एवं सम्यक् आजीव तीन प्रमुख नैतिक प्रशिक्षण बताए गए हैं। तीन मानसिक प्रशिक्षण को समाधि शिक्षा के अन्तर्गत रखा गया है जिसमें सम्यक् प्रयास, सम्यक, बुद्धि एवं सम्यक् समाधि या मनोयोग की बात कही गई है। तीन नैतिक प्रशिक्षण एवं तीन मानसिक प्रशिक्षण के बाद व्यक्ति या साधक उपाकार समाधि या ज्ञान समाधि को प्राप्त करता है जिससे वह मन एवं पदार्थ के वास्तविक स्वरूप को जानकर प्रकृति में सत्य को ढूढ सकने में सक्षम होता है। इन्हीं आठ मार्गो को हम अष्टांगिक मार्ग, मध्यम मार्ग भी कहते हैं जो निर्वाण प्राप्त कराता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मूल्य निर्माण व प्रशिक्षण एक सतत एवं जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मूल्यों का दायरा काफी व्यापक है और वर्तमान शिक्षा में इसे समन्वित करना बहुत कठिन लेकिन परमावश्यक है क्योंकि बिना मूल्यों के शिक्षा विकासोन्मुख न होकर मानव को विनाश की ओर ले जायेगा। सम्पूर्ण विश्व में बढ़ रही अराजकता, अहिंसा, अनुशासनहीनता एवं अपराध को हम सिर्फ दण्ड विधानों पर छोड़कर उससे अछूते नहीं रह सकते। ऐसे में यह समीचीन होगा अगर प्राथमिक स्तर से उच्च शिक्षा तक हम मूल्यों को विभिन्न पाठ्यक्रमों में समन्वित रूप में संगठित करें जिससे छात्र शिक्षा के माध्यम से मूल्यों की पुर्नस्थापना कर सके जिससे सम्पूर्ण मानव समाज सत्य प्रेम अहिंसा सदाचार व शान्ति द्वारा 'सर्वे भवन्तु सुखीना' को चरितार्थ कर सकें।

सन्दर्भ

- चन्द, जगदीश (2007), वेल्यू एडूकेशन, अनशा पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।
- ओल्डेनबर्ग, हरमन (2000), बुद्धा हिज लाइफ हिज डाक्ट्रिन हिज आर्डर, पिलग्रिम्स पब्लिकेशन, वाराणसी, काठमान्डु।
- मान, टिन मेहम (1995), द एसेन्स ऑफ बुद्धा अभिधम्मा, एम एम वाई पब्लिकेशन, डागोन, यांगोन।
- गोयनका, हरिकृष्णदास (सं 2010), ईशादि नौ उपनिषद, गीता प्रेस, गोरखपुर।
- गोयनका, जयदयाल (सं 2060), अध्याय 17, श्री भगवतगीता, पदच्छेद, अन्वय साधारण भाषा टीका सहित, गीता प्रेस, गोरखपुर